क्या रीढ़विहीन जीवों को दर्द का अहसास होता है?

विनता विश्वनाथन

क्या रीढ़विहीन जीवों को दर्द का एहसास होता है? यह एक अच्छा सवाल है। क्योंकि हम करोड़ों कीड़ों को भयानक दवाइयों से खेतों में मारते हैं। केंचुओं को कॉलेज की प्रयोगशालाओं में ज़िन्दा चीरकर उनके अंगों का अध्ययन करते हैं। केकड़ों, झींगों, सिक्कड़, इन सबको उबलते पानी में ज़िन्दा डालकर पकाते हैं। और बिना रीढ़ की विभिन्न प्रजातियों को ऐसे शोध में शामिल करते हैं जहां हम कानूनी और नैतिक कारणों से रीढ़धारी जानवरों को लेने की सोच भी नहीं सकते। इसके पीछे एक आम मान्यता है कि रीढ़धारी जीव (कुत्ते, मवेशी, घोड़े, कई मछलियां वगैरह) दर्द का एहसास कर सकते हैं, उनमें चेतना होती है। और चूंकि ऐसे जीव हमारे जैसे हैं (मनुष्य भी रीढ़धारी है) तो हमें उनसे हमदर्दी है। (मुझे यह तो नहीं लगता कि अगर हम मानते कि बिना रीढ़ के जीवों में मनुष्यों की तरह चेतना होती है, दर्द का एहसास होता है, तब भी हम इनको मारने से मुकरते, लेकिन शायद इनका प्रयोगों में कम इस्तेमाल करते और इनकी हत्या के तरीके कुछ बदलते।)

बिना रीढ़ जानवरों के बारे में अपनी वर्तमान सोच को हमें शायद बदलना पड़ेगा। हाल ही में हुए शोध से कुछ ऐसे प्रमाण मिले हैं जिनसे लग रहा है कि सिर्फ रीढ़ की हड्डी के होने या न होने के आधार पर हम जीवों के दर्द के एहसास सम्बंधी निर्णय नहीं ले सकते। यह निर्णय इस आधार पर भी नहीं लिया जा सकता कि अन्य जीवों का तंत्रिका तंत्र हम मनुष्यों से कितना मिलता-जुलता है। सिर्फ इसलिए कि रीढ़विहीन जंतु छोटे होते हैं और उनका तंत्रिका तंत्र अलग होता, हम यह नहीं कह सकते कि उनमें चेतना नहीं होती।

दरअसल बात शुरू हुई थी आठ साल पहले - एक खानसामा और एक वैज्ञानिक आयरलैण्ड के एक पब में मिले। खानसामा थे रिक स्टीन जिनका टीवी पर कार्यक्रम होता था और वैज्ञानिक थे राबर्ट एलवुड। स्टीन जानना चाहते थे कि केकड़ों और झींगों को दर्द महसूस होता है या नहीं। स्टीन ने शायद यह सवाल इसलिए पूछा था क्योंकि वे केकड़ों और झींगों को पकाते थे। एलवुड, जो करीब तीस सालों से इन जानवरों पर शोध करते आ रहे थे, के पास स्टीन के सवाल का कोई जवाब नहीं था। और जवाब खोजने की कोशिश उन्होंने तभी शुरू की थी।

एलवुड के सामने कई चुनौतियां थीं। एक तो दर्द की परिभाषा में दिक्कत थी और दर्द को मापना भी बहुत मुश्किल काम था। मनुष्यों में भी कोई दर्द में है और कितना दर्द में है, यह हम अक्सर पीड़ित के कुछ कहने पर ही जान सकते हैं और हमें उसकी बात माननी पड़ती है। ऐसे जीवों का क्या करें जिनसे हम संवाद नहीं कर सकते हैं? कुछ संकेतों पर निर्भर करते भी हैं तो यह कहना मुश्किल हो जाता है कि जानवर दर्द महसूस कर रहा है या फिर यह एक रिफ्लेक्स यानी अनुक्रिया मात्र है।

इस बात को एक उदाहरण के ज़रिए समझते हैं। एक केकड़े को ही लीजिए। उसको अगर आप बिजली का झटका या करंट मारते हैं तो वह करंट से हट जाएगा। इस पूरी प्रक्रिया को हम दो भागों में समझ सकते हैं। पहला है संवेदी भाग जिसमें कुछ ऐसी कोशिकाओं की भूमिका होती है जो लगभग सभी जंतुओं में पाई जाती हैं। इनको नोसीसेप्टर्स कहते हैं। ये नुकसानदायक उद्दीपनों के प्रति संवेदनशील हैं और इनके सक्रिय होते ही जानवरों में रिफ्लेक्स क्रिया होती हैं। रिफ्लेक्स क्रियाएं जानवर के बिना सोचे-समझे हो जाती हैं। जैसे करंट लगने पर केकड़ों का उनसे दूर हटना, लौ से हाथ हटाना या फिर धूप में हमारी आंखों का सिकुड़ना। ऊतक को नुकसान न हो, इस कारण सभी जानवरों में कई नुकसानदायक चीज़ों से दूर हटने के लिए ऐसी प्रतिक्रियाएं विकसित हुई हैं। तो नोसीसेप्टर्स और रिफ्लेक्स क्रिया की

बदौलत सब जानवरों को खतरों से तुरंत सुरक्षा मिलती है। लेकिन इस प्रक्रिया का एक और हिस्सा है जिनमें अन्य कुछ बातें होती हैं - रिफ्लेक्स या प्रतिक्रिया का एहसास, एक बुरे अनुभव की भावना या चेतना, या फिर कुछ लंबे समय तक इसकी कोई याददाश्त, खासकर, उस उद्दीपन से बचकर रहना सीखने की याद। ये सब बातें किसी जानवर को लंबे समय तक सुरक्षित रख सकती हैं। व्यवहार में अगर दीर्घकालीन बदलाव होता है, जिसमें याददाश्त की भूमिका है, तो शायद हम यह कह सकते हैं कि एक नकारात्मक अनुभव हुआ है और जंतु को दर्द का एहसास हुआ होगा। सवाल यह है कि क्या ये बातें भी सभी जंतुओं में होती हैं।

तो एलवुड और साथियों ने तय किया कि रीढ़विहीन जंतुओं में दर्द होता है या नहीं, इस बात का पता लगाने के लिए व्यावहारिक लक्षणों का इस्तेमाल किया जाए। उन्होंने कुछ केकड़ों को एक टंकी में छोड़ा जहां वे दो सुरक्षित जगहों में छिप सकते थे। जब किसी केकड़े ने एक जगह को चुना तो वहां उन्होंने उसको करंट मारा। ऐसा दो बार करने पर, तीसरी बार उन्होंने देखा कि केकड़े ने उस जगह को न चुनकर, दूसरी जगह को चुना। यह कई केकड़ों के साथ हुआ। यानी दो बार एक ही जगह को चुनकर करंट लगने पर, बुरे अनुभव से वे सीख रहे थे और नई सुरक्षित जगह को चुन रहे थे। इससे इतना तो कहा जा सकता है कि वे उस बुरे अनुभव से बचना चाह रहे थे। अगर केकड़े हर बार करंट लगने पर सिर्फ उस करंट से दूर हटते और करंट लगने के बाद भी दोनों सुरक्षित जगहों को बराबर चुनते तो एलवुड और साथी शायद यही कहते थे कि एक रिफ्लेक्स क्रिया हो रही है, नोसीसेप्टर्स काम कर रहे हैं। केकड़ों के व्यवहार में दीर्घकालिक बदलाव आया था। एलवुड और साथी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि केकड़ों को दर्द जैसी किसी चीज़ का अनुभव हो रहा था।

अगर यह बात सच है तो हमारे लिए मायने रखती है। क्योंकि विभिन्न विषयों, मुख्य तौर पर बायोमेडिकल शोध में कई रीढ़विहीन जंतुओं की काफी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जीव विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र में इन पर किए गए शोध के कारण अनेक खोज हुई हैं, और उससे हमें फायदे मिले हैं। ड्रोसोफिला (फलभक्षी मक्खी), सी. एलेगैन्स (गोल कृमि की एक प्रजाति), ऐप्लीसिया (समुद्री घोंघा की एक प्रजाति), मधुमक्खियां, इन सबका हज़ारों अध्ययनों में उपयोग हुआ है। 2008 से 2010 के बीच लगभग 44,000 शोध पत्र छपे हैं जिनमें ऐसे जानवरों का उपयोग हुआ है। ये जेनेटिक्स, रोग और दवाइयों की जांच सम्बंधी शोध थे। अगर हम सिर्फ नोबेल पुरस्कारों को देखें तो पिछले 50 वर्षों में रीढ़विहीन जंतुओं पर हुए शोध के कारण कम से कम 5 नोबेल पुरस्कार जीते गए हैं। सन 1901 से, जब मेडिसिन या चिकित्सा शास्त्र में नोबेल दिए जाने लगे थे, तब से लेकर आज तक 74 नोबेल पुरस्कार ऐसे हैं जिनमें जंतुओं का उपयोग हुआ है, और 18 में रीढ़विहीन जंतु शामिल थे। और लगता है कि नैतिक आधारों पर रीढ़धारी जीवों (बन्दर, कुत्ता, खरगोश इत्यादि) के शोध में उपयोग के विरोध के कारण शोध में इनका उपयोग बढ़ भी सकता है।

तो एलवुड के शोध के क्या नतीजे हो सकते हैं। खुद उनका कहना है कि और अधिक जांच की ज़रूरत है तभी हम दावे के साथ कह सकेंगे कि रीढ़विहीन जंतुओं को भी दर्द का एहसास होता है। इस जांच-पड़ताल का जो भी नतीजा निकले, तब तक हमें शायद इन जानवरों के साथ मानवीयता से व्यवहार करना चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***